उपसंहार (CONCLUSION)

तबले के साहित्य पर यदि दृष्टिपात करे, तो निष्कर्ष में एक तथ्य यह दृष्टिगोचर होता है कि तबला यह वाद्य पुरातन काल से चला आ रहा है। इस पर और गहन अध्ययन करने के बाद शोधकर्ती का कहना यह है कि अभी तक जितनी लेखी-जोखी सामग्री उपलब्ध है, उस पर गहरा अध्ययन करने के बाद यह महसूस होता है कि किसी विद्वान या लेखक ने ठोस दृष्टि से कहीं भी नहीं लिखा है कि तबले का जन्म इसी विशिष्ट शताब्दि में हुआ है। शोधकर्ती का पहला अध्याय इसी विषय से सम्बन्धित है। कहने का तात्पर्य यही है कि तबले के विधिवत क्रम में 'गत' का स्थान आने से पूर्व जिस वाद्य पर यह रचनाएँ बजायी जाती है, उस वाद्य के इतिहास एवं विकास पर प्रकाश डालना उचित होगा। अत: इसी विषय पर जो सत्य लगनेवाले तथ्य हैं, उन तथ्यों को ही लिया गया है एवं उन्हें उज़ागर करने का प्रयास किया गया है।

भारतीय संगीत के दो मूलभूत तत्त्व हैं - 'स्वर' एवं 'लय'। लय को विशिष्ट कालखंड में बद्ध करने से 'ताल' संकल्पना का उगम हुआ। सांगीतिक विकासक्रम में आदिमानव को अपने शरीर की गति से छंद का अनुभव हुआ और अनन्तर इस छंद की अनुभूति को मानव ने 'ताल' में परिणत किया। प्रकृति की गतिमानता, शारीरिक हलचल एवं बुद्धि की क्षमता के अनुसार आदिमानव ने अपने लयज्ञान का उपयोग करके विभिन्न वाद्यों की निर्मिति की। वेदकालीन वाद्य 'भूमिदुंदुभि', नटराज शिव का 'डमरू', 'त्रिपुष्कर', 'पखावज़' इन वाद्यों से लेकर तबला वाद्य तक अनेक लयताल वाद्यों की निर्मिति हुई। इनमें से तबला वाद्य के सन्दर्भ में शोधकर्ती ने शोधकार्य किया है।

तबले का उद्‌गम, जनक, जन्मकाल के बारे में तर्कसंगत जानकारी उपलब्ध नहीं है। मेसॅपोटामियन, अरेबियन, सीरियन, सुमेरियन, बाबिलोनियन, पर्शियन वाद्यों से तबले का सम्बन्ध जोड़ कर कुछ विद्वानों ने तबले को विदेशी वाद्य माना है। लेकिन कई पुस्तकों के अनुसार, चर्मवाद्य

पर स्याही के शास्त्रीय विधिवत लेपन से स्वरनिर्मिति करने का संशोधन भारत में ही हुआ है। अत: तबला पूर्णत: भारतीय वाद्य है, इसका विवेचन शोधकर्ती ने दिया है।

तबले की निज़ी स्वतंत्र भाषा है, जो मूल वर्णों पर निर्भर है। पखावज़ की भाषा पर आधारित होते हुए भी तबले की भाषा विकसित होकर पखावज़ से ज़्यादा समृद्ध हुई। ख्याल गायकी के साथी वाद्य के रूप में तबले का जन्म हुआ। तबले की विकसित बनावट के कारण सूक्ष्म, मुलायम एवं जोरदार नादनिर्मिति में सफलता पाकर तबले पर बन्द एवं खुला बाज बजाना सम्भव हुआ। बन्द एवं खुले बाजों के कारण तबले में नादविविधता निर्माण हुई। साथसंगत के साथ-साथ विभिन्न शैली एवं घरानों के उद्‌गम से तबले की स्वतंत्रवादन सामग्री का विकास हुआ। स्वरप्रधान वाद्यों की तरह तबला भी स्वतंत्रवादन क्षेत्र में सफलता से विकसित हुआ। इन पर दृष्टिक्षेप डाल कर तबले के अंगों का वर्णन, वर्ण या पटाक्षर की परिभाषा, स्वरमय - व्यंजनमय वर्ण, वाणी पर निर्धारित वर्ण, वादन पर निर्धारित वर्ण, बोलों की पढन्त - बजन्त में अन्तर, वर्णों की अनिवार्यता, वर्णों से या पटाक्षरों से निर्मित रचनाएँ इन घटकों का स्पष्टीकरण शोधकर्ती द्वारा किया गया है।

वर्णसमूहों के अवगुंठन से असंख्य रचनाओं की निर्मिति हुई है। वर्णों से शब्द, शब्दसमूह, वाक्य, वाक्यसमूह तथा बन्दिशों का निर्माण हुआ। इन बन्दिशों में विशिष्ट वर्णों का विशिष्ट संकल्पना या विशिष्ट रचना के लिए खूबी से किया हुआ प्रयोग, उनमें प्रयुक्त शब्द, क्रियापद, खाली-भरी अनुसार रचना इनका स्पष्टीकरण इस शोधकार्य के अन्तर्गत किया गया है।

विभिन्न आकार के, अलग गति के एवं अलंकारों से युक्त योजनापूर्वक शब्दप्रयोग तबले की रचनाओं को खूबसूरत बनाते हैं और तबले की भाषा अर्थपूर्ण न होते हुए भी कलात्मक आनंद देनेवाली इस सुंदर भाषा से अर्थपूर्ण सौंदर्य का आस्वाद मिलता है, इस तथ्य को शोधकर्ती द्वारा उज़ागर किया गया है।

स्वतंत्र तबलावादन अर्थात् एकल तबलावादन, जिसमें कलाकार अपनी कला की प्रस्तुति करते समय शास्त्र पक्ष को ध्यान देते हुए, उसमें तय (निश्चित) की हुई रचनाओं को वह प्रस्तुत

करता है। यहाँ तबलावादक किसी के ऊपर निर्भर न होते हुए, अपनी चिंतन और मनन से कला की प्रस्तुति कर सकता है। कहने का तात्पर्य यही है कि स्वतंत्र तबलावादन दो विभागों में बाँटा गया है, जिन्हें हम पूर्वांग अर्थात् विलम्बित लय में कला की प्रस्तुति एवं उत्तरांग अर्थात् मध्य एवं द्रुत लय में कला की प्रस्तुति करते हैं। शोधकर्ती ने इस विषय पर गहन अध्ययन करके यह तय किया कि स्वतंत्र तबलावादन पेश करने की हर घराने की अपनी एक विधि निश्चित की गई है। उसी विधि पर वह कलाकार, उस घराने को सामने रखते हुए, अपनी कला की प्रस्तुति करता है। द्वितीय अध्याय के बारे में शोधकर्ती के अपने विचार निष्कर्ष के रूप में निम्न प्रकार से हैं।

अपनी रचनाओं को दूसरों तक पहुंचाने की चाह ने स्वतंत्र तबलावादन को जन्म दिया, जिसे स्वतंत्र रूप में प्रस्तुत किया जाता है एवं जिसमें तबला वाद्य की प्रधानता रहती है। तबले की विकसित भाषा का वर्गीकरण स्वतंत्र तबलावादन में मुख्यत: दो रचनाप्रकारों में हुआ है - विस्तारक्षम रचना एवं पूर्वसंकल्पित रचना। शोधकर्ती ने द्वितीय अध्याय में इस विषय के सन्दर्भ में चर्चा की है। बन्द बाज में पेशकार, कायदा, रेला आदि विस्तारक्षम रचनाओं की और खुले बाज में टुकड़े, गत, परन, चक्रदार आदि पूर्वसंकल्पित रचनाओं की विपुलता है। गायन की आरोह-अवरोह क्रिया की तरह तबले में खाली-भरी की क्रिया है। विस्तारक्षम रचनाएँ विशिष्ट खाली-भरीयुक्त क्रियापदों से पूर्ण होती हैं। स्वतंत्र तबलावादन में पूर्वसंकल्पित रचनाओं ने विशेषत: गतों ने भाषाविविधता एवं भाषासौंदर्य से तबले का साहित्य समृद्ध किया है। गतों में सभी रचनाप्रकारों की भाषा का अन्तर्भाव होता है। इन तथ्यों का कथन शोधकर्ती ने किया है ।

संगत में ठेकाभरी, मात्राभरी करते-करते पेशकार की निर्मिति हुई। गायन के स्वरालंकार और पलटों की तरह कायदे का ढाँचा एवं पलटों की रचनाएँ हुई। रेले में तबले के प्रवाही बोलों पर विचार किया गया। लयबंधों में गूंथी हुई लड़ी, खुले बाज में गतकायदों की निर्मिति एवं वादन के उत्तरांग में बजनेवाली हर एक पूर्वसंकल्पित रचनाओं के निकष, गढ़न, शब्दयोजना, गतिमानता इनका स्पष्टीकरण इस शोधकार्य के अन्तर्गत किया गया है।

स्वतंत्र तबलावादन के प्रस्तुति-क्रम में मुख्यत: शरीरशास्त्र का विचार किया गया है। यह प्रस्तुति-क्रम विलम्बित से द्रुत की ओर आरोही क्रम से बढ़ता है। अपनी विशेषताओं के अनुसार विभिन्न घरानों में स्वतंत्र तबलावादन प्रस्तुति का अपना-अपना क्रम होता है। सामान्यत: स्वतंत्र तबलावादन के पूर्वांग में पेशकार, कायदा, रेला एवं उत्तरांग में चलन, रौ बजाकर गत, टुकड़े, परन, चक्रदार प्रस्तुत किए जाते हैं। सुसूत्र बोलों से निबद्ध पूर्वनिश्चित या पूर्वसंकल्पित रचना में भाषा, गति, निकास, गणित इनके अनुसार भिन्न वादनप्रकार निश्चित हुए हैं। शोधकर्ती का यह कहना है कि सफल वादन के लिए योग्य गुरू की तालीम, परम्परागत रिवाज़, घरानों का अभ्यास, हाथ की तैयारी, सुयोग्य निकास इनकी आवश्यकता होती है।

विस्तारक्षम रचनाओं में एक विचार-सूत्र का पलटों के माध्यम से विस्तार किया जाता है, लेकिन विभिन्न रचनाप्रकारों के विस्तार की विचार-धारा में अन्तर है। ख्याल गायन के आलाप की तरह धीमी लय में, उपज अंग से विस्तारित होनेवाला पेशकार कलाकार की योग्यता का परिचय देता है। कायदे का विस्तार मुख के बोलों से एवं दोहरा, आधादोहरा, विश्राम, आधाविश्राम, पलटे, तिहाई इस अनुक्रम से किया जाता है। नादों की अटूट गूँज निर्माण करनेवाला रेला लौट-पलट करके विस्तारित होता है। सुंदर शब्दों की लड़ी, जोरदार, खुले बोलों से युक्त गतकायदे, चलन पर आधारित कलात्मक रौ इन सभी विस्तारक्षम रचनाओं की विस्तारपद्धति का एवं टुकड़ा, गतटुकड़ा, परन, चक्रदार इन पूर्वसंकल्पित रचनाओं के सौंदर्यतत्त्वों का सोदाहरण अभ्यासपूर्ण विवेचन शोधकर्ती द्वारा दिया गया है।

शोधकर्ती ने स्वतंत्र तबलावादन का निजी अभ्यास करने के कारण स्वतंत्र तबलावादन के अन्तर्गत पूर्वांग एवं उत्तरांग की दोनों भाषा का (क्रियात्मक पक्ष की रचनाओं का) गहन अध्ययन किया है। अपितु यह निश्चित है कि स्वतंत्र तबलावादन में कलाकार को अपनी वादनप्रणाली को सामने रखते हुए गुणी श्रोताओं के सामने यदि अपनी वादन की प्रस्तुति करनी हो, तो गत एवं उनके प्रकारों को बजाना अनिवार्य है। शोधकर्ती का कथन यह है कि केवल गत को ही नहीं, किन्तु उसके

प्रकारों को भी भलीभाँति जानना एक महत्त्वपूर्ण भाग है, अर्थात् गतों के प्रकारों को जानना जरूरी है।

'गत' स्वतंत्र तबलावादन में प्रयुक्त सर्वांगसुंदर काव्य है। स्वतंत्र तबलावादन के उत्तरांग में पेशकार, कायदा, रेला के बाद प्रस्तुत किए जानेवाली यह एक कलात्मक बन्दिश है। यह कल्पनापूर्ण, पूर्वनिश्चित अर्थात् पूर्वसंकल्पित रचना है, जो किसी बदलाव के बिना जैसी की वैसी बजाई जाती है। 'गत' रचना इतनी सौंदर्यपूर्ण एवं परिपूर्ण है, कि उसके विस्तार की जरूरत ही नहीं होती है, इसलिए इसे पूर्णसंकल्पित अथवा अविस्तारक्षम रचना भी कहा गया है। स्वतंत्र तबलावादन परिपूर्ण होने के लिए उसमें सौंदर्यपूर्ण गतों का अस्तित्व आनिवार्य है। शोधकर्ती का शोधकार्य इसी विषय से सम्बन्धित है।

इस शोधकार्य में 'गत' रचना के बारे में शोधकर्ती के विचार आगे प्रस्तुत है। 'गत' गति है, तबले के विद्वान रचनाकारों के मन की स्थिति है, तबले के बोलों से प्रयुक्त धारा है। 'गत' स्वतंत्र तबलावादन की निजी विशेषता है। स्वतंत्र तबलावादन आकर्षक बनाने में गतों का बड़ा योगदान है। 'गत' की उत्पत्ति के बारे में तर्क के आधार पर शोधकर्ती को यह कहना है कि प्रकृति की विविध घटनाएँ एवं उनकी गतिमानता की अनुभूति से प्रतिभावान रचनाकारों के मन का सुंदर अविष्कार तबले की भाषा में 'गत' के रूप में प्रकट हुआ। तंत्री वाद्य, कथ्थक नृत्य इन संगीत की बाकी विधाओं में भी 'गत' का अस्तित्व है। 'गत' रचना कथ्थक नृत्य से प्रभावित है। पखावज़ के 'परन' का स्थान, तबले में 'गत' को है। कुछ गतें, कायदों की तरह खाली-भरी अनुसार बजती हैं। कई बुजुर्ग, टुकड़ों को 'गत' कह कर बजाते है। इन घटकों का अध्ययन करके शोधकर्ती का यह स्पष्ट कहना है कि 'गत' रचना 'कायदा', 'टुकडा़' , 'परन' इन रचनाप्रकारों से भिन्न है।

गतें मध्य अथवा द्रुत लय में बजायी जाती हैं। गतों में काव्य की तरह छन्द, अलंकार, यमक का प्रयोग एवं ताल के दशप्राणों में से ग्रह, जाति, यति, लय का प्रयोग निरन्तर होता रहता है। 'गत' रचना में शब्दों का लयबद्ध संचलन होता है। गतें सम के पहले कमजोर बोलों से समाप्त

होती हैं, इसलिए पुनरावृत्त की जाती हैं। गतें व्यंजन से समाप्त होती हैं, लेकिन स्वर से समाप्त होनेवाली कुछ गतें भी हैं। गतें तिहाईरहित अथवा तिहाईयुक्त हो सकती हैं। कई गतें ठाय-दून में बजायी जाती हैं। कई गतें खाली-भरी अनुसार बजती हैं, तो कई गतों की खाली में भरी के बोलों के अतिरिक्त भिन्न बोलों का प्रयोग करके खालीभाव दिखाया जाता है। विभिन्न घरानों की गतों में अपनी अलग बोली होती है। शोधकर्ती ने तृतीय अध्याय में इन विशेषताओं को उज़ागर किया है।

'गत' बेहद चुनौतीपूर्ण रचना है। गतों में विभिन्न सौंदर्यतत्त्व निहित हैं। बन्दिश का आकृतिबंध, विरामस्थान, ऱ्हस्व-दीर्घ, वजन एवं भाव समझने के लिए गतों की पढ़न्त महत्त्वपूर्ण है। शोधकर्ती को स्पष्ट रूप से यह कहना है कि योग्य गुरू से सीना-ब-सीना तालीम, निरन्तर रियाज़, एवं निकास के सुयोग्य संतुलन से ही गतों का प्रभावशाली वादन करना मुमकिन है।

खुले बाज के घरानों में गतों की विपुलता है एवं बाकी तालों की तुलना में त्रिताल में परम्परागत गतों की अधिक निर्मिति हुई है। इन तथ्यों पर शोधकर्ती ने अपना स्पष्टीकरण दिया है। प्राकृतिक गतिमानता एवं रचनात्मक विशेषताओं के अनुसार गतों के विभिन्न प्रकार हुए हैं। इन प्रकारों की सोदाहरण जानकारी इस शोधप्रबंध में शोधकर्ती ने प्रस्तुत की है।

स्वतंत्र तबलावादन में गत एवं उनके प्रकारों का महत्त्व समझने के बाद शोधकर्ती इस निष्कर्ष पर पहुँचती है कि तबलावादक को स्वतंत्र तबलावादन करने के लिए विभिन्न घरानों के गतों की जानकारी लेना आवश्यक है। तथा ये गतें किस घराने की है, उनके रचयिता का नाम, उन गतों की विशेषता, निकास तथा लय की जानकारी लेना अत्यंत आवश्यक है। यदि तबलावादक इस ज्ञान से वंचित रहता है, तो गुणिजनों के सामने स्वतंत्र तबलावादन पेश करते समय गुणी तबलावादकों का मानसम्मान नहीं कर पाता है। अपितु, वह कलाकार तो बनता है, लेकिन समाज में उसका स्थान न के बराबर होता है।

स्वतंत्र तबलावादन की सामग्री का विकास, बाज या वादनशैली के माध्यम से हुआ। परम्परा से आयी हुई तबले की विद्या एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित होकर जीवित रखी गई।

यह प्रक्रिया ही तबले के घरानों की निर्मिति का कारण हुई और तबले में दिल्ली, अजराड़ा, लखनऊ, फर्रुखाबाद, बनारस, पंजाब ये छह घरानें प्रस्थापित हुए। बन्दिशें, निकास एवं वादन-वैशिष्ट्यों की भिन्नता के कारण हर एक घराने की अपनी स्वतंत्र पहचान है। शोधकर्ती ने चतुर्थ अध्याय में विभिन्न बन्दिशों के उदाहरणों सहित इन छह घरानों पर प्रकाश डालने का प्रयास किया है।

'दिल्ली घराना' तबले का आद्य घराना है। इस घराने का बाज नाजूक, मधुर है। इसे 'किनार का बाज' एवं 'दो उँगलियों का बाज' कहा गया है। इसमें चतस्त्र जाति के विस्तारक्षम रचनाओं की विपुलता है। 'अजराय्ड़ा घराना' दिल्ली का शागिर्द घराना माना गया है। लेकिन इन दो घरानों की विचारधारा में अन्तर हैं। दिल्ली की तुलना में अजराड़ा घराने के बोलों की निकास में किनार का कम उपयोग करके अनामिका को प्रयोग में लाया गया है। अलग ढंग की खाली, मींडकाम, घीसकाम, तिस्त्र जाति का प्रयोग ये इस घराने की विशेषताएँ हैं। बन्द बाज होने के कारण दिल्ली एवं अजराड़ा घरानें में भारी बोल बजाना अनुकूल नहीं होता है। इसी कारण इन घरानों में गतों की निर्मिति कम हुई है, इसका स्पष्टीकरण शोधकर्ती ने किया है।

तबले का 'लखनऊ घराना' खुले बाज का आद्य घराना है। सभी उँगलियों के प्रयोग के कारण इसे 'थापियाँ बाज' कहा गया है। इस घराने में लव एवं स्याही का प्रयोग किया जाता है। इसमें गतकायदे, रेले एवं पूर्वसंकल्पित रचनाओं की अधिक निर्मिति हुई है। 'फर्रुखाबाद घराना' लखनऊ घराने का शागिर्द घराना होते हुए भी रचना एवं निकास भिन्नता के कारण फर्रुखाबाद घराने ने अपनी अलग पहचान बनायी है। इसमें दायाँ-बायाँ के सभी निकासों का समावेश है एवं इसमें सभी वादनप्रकारों की निर्मिति हुई है। फर्रुखाबाद घराने का पेशकार प्रसिद्ध है। 'गत' इस घराने की प्रमुख विशेषता है। फर्रुखाबाद घराने के कई विद्वानों ने सौंदर्यपूर्ण बन्दिशों की रचना करके इस घराने को समृद्ध किया है। 'बनारस घराना' लखनऊ घराने का शागिर्द घराना है, परन्तु इस घराने के कलाकारों ने दिल्ली एवं लखनऊ इन दोनों घरानों की अर्थात् बन्द-खुले बाजों की विशेषताओं का अध्ययन कर अपनी अलग वादनशैली निर्माण की। 'फरद गत' इस घराने की विशेषता है। लव और किनार का योग्य प्रयोग, दायें-बायें पर जोरदार आघात, गति, स्पष्टता, तैयारी, अथक परिश्रम इन

गुणों से बनारस घराने का वादन अभूतपूर्व होता है। इसी प्रकार लखनऊ घराना एवं उसके दो शागिर्द घरानें फर्रुखाबाद एवं पंजाब इन खुले बाज के घरानों की विस्तृत चर्चा करते हुए। उनकी विभिन्न सौंदर्यतत्त्वों का सोदाहरण प्रस्तुतिकरण शोधकर्ती द्वारा किया गया है।

'पंजाब घराना' तबले के बाकी घरानों के प्रभाव से मुक्त, स्वतंत्र रूप में प्रस्थापित, खुले बाज का घराना है। इसका विकास पखावज़ के आधार पर हुआ है । हाथ का रखाव, निकास, क्लिष्ट लयकारी, लम्बी रचनाएँ इन पर पंजाब घराने ने विशेष ध्यान दिया है। लम्बछड़ गतें, रेले, मिश्र जाति के पंजाबी चाले, विभिन्न विश्राम की तिहाईयाँ इन पंजाब घराने की विशेषताओं की चर्चा प्रस्तुत शोधप्रबंध में की गई है।

सृजन, मनुष्य का धर्म है। यही कारण रहा है कि सभी घरानों के कलाकारों ने परम्परागत बन्दिशों के अतिरिक्त स्वयंरचित नवीन बन्दिशों को भी प्रदानता दी है, जिनका संकलन भी अत्यन्त आवश्यक है। इन कलाकारों ने ये रचनाएँ कब बनायी एवं उन्हें लोगों के सामने प्रस्तुत की, ये जानना मुश्किल है। इसी कारण जिन्होंने तबले के क्षेत्र में अपना बहुत बड़ा योगदान दिया, ऐसे मूर्धन्य कलाकारों की जीवनियाँ उज़ागर करने का प्रयास पाँचवें अध्याय में किया है। अन्य माध्यमों या पुस्तकों से इकठ्ठा की हुई कलाकारों की जानकारी का भी इसमें समावेश हैं। रचनाओं के बारे में दृष्टिपात करें तो, अधिकाधिक जितनी गतें प्राप्त हुई, उन्हें इस शोधप्रबंध में लिपिबद्ध किया गया है। इसका मुख्य कारण यही है कि शोधप्रबंध 'गत' विषय पर ही लिखा गया है।

प्रतिभावान, विद्वान बुजुर्ग कलाकारों एवं रचयिताओं से रचायी गई उत्तमोत्तम 'गत' रचनाओं का अध्ययन करके शोधकर्ती को दृढ विश्वास हुआ है कि इतनी सौंदर्यपूर्ण रचनाएँ इन बुजुर्गों के सांगीतिक योगदान का ही प्रतिफल है, जो सभी तबलावादकों को निश्चित ही प्रेरणादायक है। इन बुजुर्गों के योगदान के फलस्वरूप आज तबला जीवित है और यह जीवित होने के नाते आज के कलाकार अपने स्वतंत्र तबलावादन में इन महान कलाकारों की सुंदर रचनाओं का प्रस्तुतिकरण करते हैं। शोधकर्ती के अनुसार इन ज़्येष्ठ-श्रेष्ठ बुजुर्गों की जीवनी एवं गीनी-चुनी रचनाओं का

अध्ययन हर एक तबलावादक के कलात्मक उन्नति के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। गुरूजनों से तालीम लेकर इन बन्दिशों पर चिंतन, रियाज़ करने के पश्चात् ही उन्हें अपने वादन में पेश करना शोधकर्ती को उचित महसूस होता है।

सभी घरानों से सम्बन्धित सभी प्रकार के तथ्यों को प्रस्तुत करने के पश्चात् यह सिद्ध नहीं हो जाता कि भविष्य में सभी घरानों से सम्बन्धित शोध की संभावनाएँ क्षीण हो गई हैं, अपितु यह संभावनाएँ और अधिक उज़ागर हो गई हैं। मेरा उन विद्यार्थियों से नम्र निवेदन है कि गतों पर यदि कोई शोध करना चाहते हैं, तो इस प्रबंध में यदि कुछ रह गया हो, तो निश्चित ही अपने शोध द्वारा उद्घटित करें। यह गतों को विकसित करने के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कारक एवं योगदान सिद्ध होगा। शोधकर्ती अपने नम्र निवेदन से यह लिखना चाहती है कि अपने चिंतन, मनन एवं मिले हुए मार्गदर्शन तथा कलाकारों की सहायता से जो जानकारी प्राप्त की है, उसे इस शोधप्रबंध में देने का कष्टसाध्य प्रयास किया है। यदि इसमें किसी विद्वान कलाकार, चिकित्सक या जिज्ञासु विद्यार्थी को कोई कमी दिखाई देती है, तो शोधकर्ती क्षमाप्रार्थी है।